चतुर्थ अध्याय --

चित्रलेखा ` में अभिव्यक्त दार्शनिकता ---

प्रस्तावना

भगवतीचरण वर्मा के ` चित्रलेखा ` उपन्यास में दार्शनिकता

` चित्रलेखा ` में जीवन सम्बन्धी दृष्टिकोण

` चित्रलेखा ` में पाप - पुण्य

` चित्रलेखा ` उपन्यास में भोगवादी दर्शन

` चित्रलेखा ` में प्रवृत्ति मार्ग

` चित्रलेखा ` में निवृत्ति मार्ग

नि ष्क र्ष ---

` चित्रलेखा में अभिव्यक्त दार्शनिकता `

के अनुसार

" Our medding intellect
Misshapes the beautious froms of things
We muder to dissect ;
Enough of Science and Art;
Close up those borren leaves
Come froth and bring with you a heart
That watches and receives."[1]

अर्थात ` यह बुध्दि बीच आनंद में रोडे डालकर प्रत्येक वस्तु के रूप को, उसके वास्तविक सौन्दर्य को विकृत कर देती है । हम कला और विज्ञान के फेर में पडकर उस चीज को ही नष्ट-भ्रष्ट कर देते हैं । बन्द कर दो, इन ज्ञान-विज्ञान के भरे पन्नों को, इनकी काफी उन्नति हो चुकी। अब अपने हृदय को उन्नति दो, जो वस्तु के वास्तविक सौन्दर्य परखता है और उसका आनंद लेता है ।

उक्त कवि के वचनों में बहुत सार है । जब हम किसी वस्तु का अध्ययन करने बैठते हैं, तो वास्तव में उसके आनंद से हम हाथ धो बैठते हैं । फिर साहित्य, जो जीवन का प्रतिरूप है - उसे तो अध्ययन करने की हम सोच ही नहीं सकते, उसका केवल अनुभव ही किया जा सकता है । करीब-करीब इसी बात को ` चित्रलेखा ` के लेखक ने उपन्यास के रूप में विश्लेषण करके दिखाया है -- ` जो बात अध्ययन से नहीं जानी जा सकती, उसको अनुभव से जानने का प्रयत्न करने के लिए ही मैं तुम दोनों को संसार में भेज रहा हूँ ।" [२]

इसलिए महत्व के विचार से अनुभव ही कीमती है - कोरा ज्ञान नहीं । ` चित्रलेखा ` में जो जीवन की झाँकी मिलती है, उसमें अनुभव प्रधान है । उसमें वर्णित

सत्यासत्य का निरूपण ठोस अनुभव के आधार पर हुआ है । इसीलिए 'चित्रलेखा' के संसार में प्रवेश करके उसमें रहकर जो आनंद और संवेदना मिलती है, उसी की बात लिखना अभिष्ट होता है ।

उपन्यास साहित्य और दर्शन --

भारतीय वाङ्मय में दर्शन अलौकिक सत्ता सम्बन्धि चिंतन-मनन का विषय रहा है । भारतीय उर्वरा - भूमि की यह विशेषता रही है कि यहाँ के साहित्यिक बहुमुखी प्रतिभा से युक्त - चिन्तक, विचारक, चिकित्साशास्त्री, ज्योतिष्यशास्त्री आदि विविध ज्ञान-विज्ञानों के ज्ञानी रहे हैं । 'अखण्डमण्डलाकार व्याप्त येन चराचरम' में जिस परमशक्ति का उल्लेख किया गया है, उसका स्वरूप क्या है ? वह क्या है ? वह कैसी है ? उसका अस्तित्व क्यों है ? यही प्रश्न तो दर्शन के मूल हैं । सृष्टि के अनंत प्रागंण में ब्रह्माण्ड-ग्रह, उपग्रह, नक्षत्र, नीहारिका, उल्का तथा अन्यान्य ज्योर्तिमय महापिण्ड पुँजीभूत हैं, उसके समष्टिगत विस्तार का अनुमान मनुष्य की सीमित बुध्दि के कल्पनातीत है । तब भी साहित्यिक तथा दार्शनिक अपनी सीमित बुध्दि से ही उस असीम दर्शन करने का आनादि काल से जिज्ञासू रहा है । दार्शनिक तथा साहित्यिक प्रकृति के नित-नूतन रहस्यों का उद्घाटन अपने अपने ढंग से कराते हैं । साहित्यकार 'सत्य शिवं सुंदरम' परम सत्ता की आराधना सुंदर के रूप में और दार्शनिक 'सत्यम' के रूप में करता है, पर दोनों का साध्य 'शिवम्' है । साहित्य का कल्पन-विधा का सर्जक - कथाकार एक ओर तो वह कल्पना के भव्य महल का कारीगर है और दूसरी ओर मनीषी, चिन्तक, विचारक एवं दार्शनिक है । दार्शनिक जहाँ सत्य का उद्घाटन शास्त्रीय मानदण्डों से करने का प्रयास करता है, कथाकार वहीं शास्त्रीय कसौटी से विलग अपने स्वानुभूत जीवन की अभिव्यक्त करता है । यह स्वानुभूत जीवन उसके साहित्य का दर्शन बन जाता है , जिसे जीवन - दर्शन भी कहते हैं ।

उपन्यासकार और दार्शनिक दोनों मंगलमयी भावना से अनुप्राणित होकर जीवन की समीक्षा करते हैं, जीवन का एक चित्र चित्रित करते हैं । उपन्यास में मानव मन की प्रतिच्छवियों एवं जीवन दर्शन के यथार्थ स्वरूप की अभिव्यंजना होती है ।

डा.उदयभानुसिंह के शब्दों में ` दर्शन तथ्यों की सूची न प्रस्तुत करके उनके विहित और नियमित रूप में तर्कसंगत उपस्थापन करता है, उसी प्रकार काव्य अस्त-व्यस्त वैविध्यपूर्ण जीवन के तथ्यों का अनुकरण करके उनकी व्यवस्थित एवं स्मरणीय अभिव्यंजना करता है ।' [३]

चिरंतन शक्ति के प्रति जिज्ञासा साहित्य एवं दर्शन दोनों का मूलाधार है । दार्शनिक का चिंतन बुध्दिपरक होता है । जब सा पर जब साहित्य में उतरता है तो भावना परक हो जाता है । और भावना से जो तृष्टि मिलती है, वही आनंद है और आनंद भावमय होता है । दार्शनिक जीवन और जगत के रहस्य का अनुसंधान करता है । साहित्यकार भी यही करता है, पर दोनों की प्रतिक्रियाएँ भिन्न हैं । साध्य एक होते हुए भी साधन - उपकरण भिन्न हैं ।

साहित्यिक विधा में उपन्यास एक ऐसा माध्यम है, जिसका संबंध जीवन-जगत की यथार्थाभिव्यंजना से है । अतएव यह लौकिक - अलौकिक जीवन की यथार्थाभिव्यक्ति करनेवाले दर्शनशास्त्र से सर्वथा सश्लिष्ट भी नहीं रह सकता और असंप्रक्त भी । तात्पर्य यह है कि बुध्दि और भावना दोनों तटों को संस्पर्श करती हुयी औपन्यासिक सरिता प्रवाहमान है । उपन्यास भावप्रधान भी होता है और विचार प्रधान भी । उपन्यासकार भावानुभूतियों के सहारे अपने विचारों की कथात्मक अभिव्यक्ति करता है । उपन्यासकार का लक्ष्य जहाँ मनोरंजन करना प्रधान होता है और ज्ञान तथा सत्य की अभिव्यक्ति आनुषांगिक वही दार्शनिक केवल चिरंतन सत्य की खोज ही अपना प्रेय एवं श्रेय मानता है । जिस उपन्यासकार की कृतियों में दोनों का समन्वय होता है वह रचना सर्वश्रेष्ठ होती है । औपन्यासिक जगत में भगवती बाबू एक ऐसे कलाकार हैं जिनकी कृतियों में तथाकथित विशेषताएँ समन्वयात्मक रूप में समाविष्ट हुयी हैं । दर्शन एवं आदर्श कल्पना के समन्वय बिना ` चित्रलेखा ` एक महान कृति की रचना असंभ थी ।

संक्षेप में कहा जाता है कि उपन्यास और दर्शन एक - दूसरे के विरोधी लगते हुए भी विरोधी नहीं हैं । उपन्यास सरस मानव मन की कथा कहता है ।

दार्शनिक शुष्क तर्कों से सृष्टि और सृष्टि के कारण तथा नियंता की व्याख्या करता है । उपन्यास में तो पात्रों के माध्यम से लेखक के अनुभूत जीवन-दर्शन की जाने - अनजाने परोक्ष - अभिव्यक्ति हो जाया करती है, जबकि दर्शन में तथाकथित विषयों के अतिरिक्त किसी भी विषय की विवेचन - विश्लेषण नहीं हो सकता । दोनों अपने - अपने ढंग से अपनी - अपनी समस्याओं का समाधान करते हैं ।

भगवतीचरण वर्मा के `चित्रलेखा` उपन्यास में दार्शनिकता --

वर्माजी एक आस्थावादी कलाकार हैं । उनका जीवन दर्शन यथार्थ जीवन के ठोस धरातल पर अवलंबित होने के कारण स्वस्थ है । नैसर्गिक जीवन की अपेक्षा करना उनकी दृष्टि में अप्राकृतिक है । मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ कुरूप नहीं हैं, उसका प्रतिक्रियात्मक रूप विकृत हो सकता है । `साधारण मनुष्य में गुण सक्रिय हैं और विकार निष्क्रिय हैं । साधारण मनुष्य में जो विकृतियाँ दीखती हैं वे उसकी स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ न होकर प्रतिक्रियात्मक प्रवृत्तियाँ हैं । स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ वह हैं जो अकारण हों`[४] प्राकृतिक भावनाएँ यदि तृप्ति चाहती हैं तो उन्हें दबाना अहितकार है[५] । वर्माजी के इसी दृष्टिकोण का परिणाम है कि उनका जीवन - दर्शन भोगवाद पर आधारित है । किंतु यह भोगवाद विकृत नहीं है और न उसके कारण वर्माजी का जीवन दर्शन ही भौतिकवादी है । उच्छृंखल भावनाओं की वे तृप्ति हेय मानते हैं[६] । अनैतिक भावनाओं का उनके जीवन दर्शन में कोई स्थान नहीं है । युगानुकूल परिवर्तनशील मान्यताएँ तो वह स्वीकार करते हैं परंतु परम्परागत मान्यताओं के दूषित रूप से उन्हें पितृष्णा है । व्यक्ति स्वातंत्र्य, इसीलिए वर्माजी के जीवन दर्शन का मूल स्वर है । यह व्यक्तिवादी चेतना असामाजिक नहीं अपितु अपनी व्यापकता के कारण संपूर्ण मानवता को आत्मसात करती है । `चित्रलेखा` में महाप्रभु रत्नाम्बर के शब्दों में `अच्छी वस्तु वही है, जो तुम्हारे वास्ते अच्छी होने के साथ दूसरे को वास्ते भी अच्छी हो ।`[५] यही दृष्टिकोण जीवन दर्शन को व्यापकता प्रदान करता है ।

मनुष्य अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति के साथ अनुरूप आचरण क्यों करता है ? इसमें वर्माजी का नियतिवादी दर्शन निहित है । वर्माजी एक नियतिवादी कलाकार हैं

और उनके जीवन दर्शन का मूलस्वर नियतिवादी है जिसकी अभिव्यंजना सर्वत्र उनके साहित्य में हुयी है । स्वयं भगवतीचरण वर्मा के शब्दों में "मैंने वेदान्त के दर्शन को अपने जीवन में उतारने की बडी कोशिश की है । लेकिन जिन्दगी के हरेक कदम पर जो मैं पिटा हूँ, हरेक बाजी में जो मैंने मात खायी है, उससे मुझे इस दर्शन के नवीन सूत्र को खोज निकालने के लिए विवश होना पडा । अपने अनुभवों के आधार पर । यह नवीन सूत्र नियतिवाद का ।"[६] भगवती बाबू अपने नियतिवादी दर्शन का प्रेरणा स्रोत 'गीता' का कर्मवादी दर्शन मानते हैं । भगवती बाबू का पूरा जीवन नियतिवाद के दर्शन से अनुप्राणित और अनुशासित रहा है। यह कर्म भी तो अपनी आंतरिक प्रवृत्तियों का तथा बहि:परिस्थितियों का योग है और भगवती बाबू के 'चित्रलेखा' में यह नियतिवादी दर्शन अनजाने ही उतर आया है ।

'चित्रलेखा' में रत्नाम्बर के माध्यम से वर्माजी कहते हैं - "मनुष्य अपना स्वामी नहीं है, वह परिस्थितियों का दास है - विवश है । वह कर्ता नहीं है, वह केवल साधन है ।"[७] चित्रलेखा में अनजाने ही वर्माजी का नियतिवादी दर्शन मुखरित हुआ है । कवित्वमय चमत्कृत करनेवाले तथा अकाट्य तर्कों से सुसज्जित परम्परागत दार्शनिक विचारों से युक्त एक साफ सुथरी छोटी-सी कहानी 'चित्रलेखा' है । 'चित्रलेखा' में दार्शनिकता का आदि रूप अभिव्यक्त हुआ है ।

चित्रलेखा में नियतिवादी दार्शनिकता --

कलाकार का अपने जीवन के अनुभवों पर आधारित अनुभूत सत्य उसका निज का दर्शन होता है , जिसे वह अपनी कृतियों में कला के माध्यम से अभिव्यक्त करता है । उसके साहित्य का अध्ययन करते समय जिन सूत्रों की खोज निकालते हैं, उन्हें ध्यान में रखते हुए समीक्षात्मक शैली में कृतिकार के साहित्य की दार्शनिक चेतना कह सकते हैं । दर्शनशास्त्र के जीवन के अनुभवों की व्युत्पति है, जीवन को दर्शनशास्त्र के अनुसार नहीं ढाला जा सकता है, क्योंकि जीवन अबाध गति में विकसित हो रहा है ।

वर्माजी ने अपने जीवन की लम्बी अवधि में , नियती की हिलकारों में बहते हुए, संघर्षों के झंझावात को झेलते हुए संसार के विविध अनुभवों द्वारा जो जीवन -

सत्य प्राप्त किया है, उसे उन्होंने एक ईमानदार कलाकार की भाँति अपने साहित्य में व्यक्त किया है ।

अ) `चित्रलेखा` में जीवन सम्बन्धि दृष्टिकोण --

जीवन क्या है ? जीवन में बुध्दि, भावना और प्रवृति में कौन बलवान है ? मनुष्य के कार्यों को तौलनेवाली समाजद्वारा निर्मित पाप-पुण्य के तराजू की क्या असलियत है ? प्रेम क्या है ? प्रेम की पूर्ण स्थिति तक पहुँचने में कितनी सीढियाँ चढनी पडती है ? जीवन के लिए बताये गये मार्गो में जो जीवन आदर्श है, कौन श्रेष्ठ है ? यह सब दार्शनिक प्रश्न है और इन सब पर चित्रलेखा में प्रकाश डाला गया है । यह याद रखना चाहिए कि यह प्रकाश अनुभव से प्राप्त हुआ है । यह ठीक भी है कि सत्य केवल अनुभव की वस्तु है ।

वर्माजी जीवन को उसके समग्ररूप में देखने के अभ्यस्त हैं और इस प्रकार वे एक आस्थावादी कलाकार भी है । जीवन के विषाय में उनकी व्याख्या है कि जीवन एक निरंतर कर्म शृंखला है । एक कर्म दूसरे से अभिन्न रूप से संलग्न है । उनके अनुसार `जीवन अक्लिष्ट कर्म है, न बुझानेवाली पिपासा है । जीवन हलचल है, परिवर्तन है और हलचल तथा परिवर्तन में सुख और शांति का कोई स्थान नहीं है ।`[८] क्रिया - प्रतिक्रिया के रूप में जीवन मृत्यू तक कर्म अनवरत चला करता है । दार्शनिक शब्दावली में कहा जाता है कि जीवन मृत्यू प्रेरित कर्म शृंखला है । मानवमात्र जन्म लेते है । मृत्यू जीवन का चरम विकास है, चरम लक्ष्य है और है जीवन का चरम तत्व ।

ब) `चित्रलेखा` में पाप - पुण्य --

वर्माजी ने नियतिवादी दर्शन को विभिन्न रूपों में अपने उपन्यासों के पात्रों द्वारा प्रस्तुत किया है । चित्रलेखा में यह दर्शन पाप - पुण्य की सीमाओं में बँधा हुआ व्यक्ति की परिस्थितियों की ओर संकेत करता है ।[९] प्रत्येक व्यक्ति अपनी विशिष्ट परिस्थितियों में जन्म पाता है और वह किसी निश्चित विधान के अनुरूप कर्म करता है या उसे कर्म करने के लिए बाध्य होना पडता है । मनुष्य को चाहते हुए भी इस

विधान से मुक्ति नहीं मिल सकती है इसलिए वह विवश है, स्वतंत्र नहीं, परिस्थितियों या अदृष्ट के विधान में बँधा हुआ निरीह परतंत्र है, वह कर्ता नहीं, केवल साधन है ।" [९] इसी अदृश्य विधान की दासता के रूप में ऐच्छिक या अनैच्छिक मानव उसके इंगित इशारों पर सब कुछ करने को विवश हो जाता है ।

वर्माजी के साहित्य में नियतिवादी दार्शनिकता की दृष्टि से 'चित्रलेखा' का विशिष्ट स्थान है । 'पाप और पुण्य' को जानने के लिए बिजगुप्त के पास श्वेतांक और योगी कुमारगिरि के पास विशालदेव आये हैं । परंतु 'नियति' के प्रभाव से कुमारगिरि सदृश्य योगी भी नहीं बच पाता है । जिससे योग-साधना के द्वारा वासना पर विजय पा ली है, संसार उसके लिए साधन भर हैं, स्वर्ग उसका लक्ष्य है । वह नियति के समक्ष झुक जाता है । भगवान से कुमारगिरि कहता है कि हे भगवान इसमें क्या रहस्य छिपा है । वह अपनी इच्छा भगवान पर ही छोड देता है । बीजगुप्त जो एक भोगी है, अंत में श्वेतांक को सबकुछ अपर्ण कर संन्यास लेता है । बीजगुप्त के शब्दों में 'हमारे प्रत्येक कार्य में अदृश्य का हाथ है । उसकी इच्छा ही सब कुछ है ।" [१०]

इस तरह वर्माजी ने नियतिवादी दर्शन को पात्रों के माध्यम से नियति की व्यापक विभीषिका चित्रित करके मानव को नियति के अधीन कर दिया है ।

'चित्रलेखा' उपन्यास में भोगवादी दर्शन --

जीवन की जटिल समस्याओं, यातनाओं और विडम्बनाओं के झकोरो से झकझोरित मानव में निराशा छा जाती है । परंतु व्यावहारिक जीवन में व्यक्ति निरन्तर निराशा का स्तवन नहीं कर सकता । फलत: दु:खों से विमुक्त होने के लिए कोई न कोई मार्ग अवश्य खोज निकालता है । वर्माजी के उपन्यासों के बहुधा पात्र मध्य-वर्ग के हैं, जिनमें जीवन की कटुता, अवसाद, विकलता और क्षणभंगुरता के कारण एक घुटन-सी भर गयी है । अतएव वर्माजी ने उनकी बौद्धिक श्रान्ति, मानसिक विक्षोभ और कायिक-क्षुधा को मिटाने के लिए इंद्रिय-सुख अथवा भोगवाद का सूत्र ढूँढ निकाला है जिसके उपकरण में - संगीत, सुरा और सुन्दरी को वर्माजी ने अच्छा

माध्यम माना है। जीवन जगत की कटुताओं से मुक्ति पाने के लिए सुरा सुन्दरी के अतिरिक्त उन्हें कोई वस्तु नहीं सुहाई। वर्माजी के साहित्य में एक सीमा तक हम इस भोगवादी प्रवृत्ति का पोषण पाते हैं।

जीवन की कटुता, विषाद तथा क्षणिकता से भयभीत हो वर्माजी अपनी प्रेयसी के रूपसि पराग की हाला को यौवन चषक से पीना चाहते हैं।

> पीने दे, पीने दे। यौवन की मदिरा का प्याला,
> मत याद दिलाना कल की, कल है कल आने वाला।
> है आज उमगों का युग, तेरी मादक मधुशाला।
> पीने दे जी भर रूपसि अपने पराग की हाला।"[११]

इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्माजी के भोगवाद आधार - जीवन की कटुता, विषाद, क्षणिकता, जीवन - जगत की परिवर्तनशीलता और अस्थिरता ही है। उपन्यास साहित्य में वर्माजी ने इन्हीं समस्याओं से अपने पात्रों को मुक्ति दिलाने के लिए भोगवादी दर्शन को अपनाया है। प्रारंभिक कृतियों से लेकर 'प्रश्न और मरिचिका' तक वर्माजी के भोगवादी दर्शन की अभिव्यंजना हुयी है। 'पतन' में - प्रतापसिंह, सरस्वती, भवानीशंकर, 'चित्रलेखा' में चित्रलेखा, बिजगुप्त, 'तिन वर्ष' में रमेश - प्रभा, अजित - लीला, 'रेखा' में - रेखा, सोमेश्वर, प्रभाशंकर, देवकी, शशिकांत, रत्ना चावला, योगेन्द्रनाथ मिश्र, 'सिधी सच्ची बातें' में - जगतप्रसाद, सुषमा, कुलसुम, 'सबहि नचावत रामगोसाईं' में -- पृथ्वीपाल सिंह, सिल्वेनिया जोजेफ या शैलजा, रामानुज रशीदा या रश्मि देवी, रामसजीवन, मिसेज मार्था, 'टेढे मेढे रास्ते' में -- उमानाथ हिल्डा तथा 'प्रश्न और मरीचिका' में -- उदयराज उपाध्याय - बिन्देश्वरी, सोफीगार्डनर, केसरबाई, कान्ता - ज्ञानगौरव, शिवकुमार गाबडिया, माया शर्मा आदि ऐसे पात्र हैं, जिनके माध्यम से लेखक के भोगवादी दर्शन की पुष्टि मिलती है।

'चित्रलेखा' भगवतीबाबू के भोगवादी दर्शन की सशक्त कृति है, क्योंकि उसमें पाप-पुण्य का भेद काल्पनिक रूप में स्वीकार किया है, वास्तविक नहीं। बीजगुप्त और चित्रलेखा के जीवन का इष्ट आमोद - प्रमोद है तथा यही उनके जीवन का

साधन और लक्ष्य भी । नैतिक आचार जो समाज स्वास्थ्य के लिए आवश्यक समझे जाते हैं ,वह उन्हें स्वीकार नहीं है । चित्रलेखा का जो अभिष्ट जीवन है वह कभी न बुझानेवाली पिपासा है । इसीलिए कुमारगिरि को देखते ही उसके मन में बीजगुप्त का आकर्षण धूमिल पड़ने लगता है और अंत में वह अपने को कुमारगिरि के हाथों में सौंप देती है । छलकते हुए मदिरा के पात्र को चित्रलेखा के मुख से लगाते हुए बीजगुप्त कहता है ' चित्रलेखा जानती हो जीवन का सुख क्या है ?' चित्रलेखा की अधखुली आँखों में मतवालापन था और उसके अरूण कपोलों में उल्लास था । यौवन की उमंग में सौन्दर्य किलौलि कर रहा था,अलिंगनपाश में वासना हँस रही थी । चित्रलेखाने मदिरा का एक घूँट पिया इसके बाद वह मुस्कुरायी । एक क्षण के लिए उसके अधरों ने बीजगुप्त के अधरों से मौन भाषा में कुछ बात कही, फिर धीरे से उसने उत्तर दिया - मस्ती । वे दोनों विगत के दारूण दु:ख को दूर करने और अनागत के भय से दूर रहने के लिए मदिरापान करते हैं ।' चित्रलेखा' में वर्माजी व्यक्ति स्वातंत्र्य का आवाहन यौन समस्या,के माध्यम से करते हैं । पाप - पुण्य का प्रश्न उठाकर लेखक ने समस्या को व्यापक परिवेश पर उपस्थित किया है । वस्तुत: लेखक यौन सम्बन्धी स्वतंत्रता की माँग करते हुए प्रेम को विवाह से उच्च स्थान देते है । विवाह संबंधी परम्परागत मान्यताओं की अवहेलना करते हुए वह जन मूल्यांकन प्रस्तूत करता है । जिसमें स्त्री-पुरूष के चिरस्थायी सम्बन्ध को विवाह की संज्ञा से अभिहित किया जाता है । अत: भगवतीबाबूजी परम्परागत सदाचार का विरोध करते हुए स्वच्छन्द भावनाओं एवं मन:प्रवृत्तियों को खुलकर खेलने और उपभोग करने का अवसर देते हैं । जीवन के स्वच्छन्द भोग विलास में उनकी आस्था है । इसीलिए उन्होंने योग और अध्यात्मवाद की उपेक्षा कर भोगवाद को प्रश्रय दिया है । लेखक की मान्यता है कि जीवन एक प्रवहमान सरीता है, उसे मुक्त प्रवाह में बहने देना ही श्रेयस्कर है । जीवन के मुक्त प्रवाह में न बहकर संयम,नियम,योगादि के द्वारा उसकी गतिविधि को नियंत्रित करना अस्वाभाविक ही नहीं, जीवन की उपेक्षा है । स्वाभाविक जीवन क्रम से मुख मोड़ने पर व्यक्ति का स्वस्थ विकास संभव नहीं है । नैसर्गिक वृत्तियों को दबाना,उससे दूर भागना मनुष्य की दुर्बलता का द्योतक है । वही व्यक्ति

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR.

स्वाभाविक जीवन से भागता है, जिसमें परिस्थितियों से संघर्ष करने की सामर्थ्य नही होता । इसीलिए अतीत और भविष्य की उपेक्षा कर वर्माजी ने वर्तमान के उपभोग पर बल दिया है ।" भूत और भविष्य, ये दोनों ही कल्पना की चीजे हैं, जिनसे हमको प्रयोजन नहीं, वर्तमान हमारे सामने है और वह उल्लास - विलास है, संसार का सारा सुख है,यौवन का सार है ।" बिजगुप्त की मादकता चित्रलेखा है और चित्रलेखा उन्माद बिजगुप्त है । वे दोनों अपना जीवन शराब के नशे में यौवन की मादकता में और वासना की क्रीड में स्वच्छन्द रूप से हास-विलास में व्यतीत करनेवाले हैं । पाप पुण्य से परे स्वतंत्र जीवन पुलक से भरा मस्ती से ओत-प्रोत यौवन की उमंग में सौन्दर्य के किल्लोलों में विराग से विसग अनुराग से रंजित, वासना से सुवासित सहवास में चित्रलेखा और बिजगुप्त हर क्षण अध्यस्त हैं । चित्रलेखा के शब्दों में -' कुमारगिरि निर्जन का निवासी है और हम दोनों कर्मक्षेत्र के अभिनेता हैं । कुमारगिरि ने वासनाओं का हनन कर दिया और हम दोनों वासनाओं पर विश्वास करते हैं । कुमारगिरि के जीवन का लक्ष्य है कल्पना का शून्य और हम दोनों के जीवन का लक्ष्य है मस्ती का पागलपन । प्रियतम ।" इस प्रकार हम देखते हैं कि ऐहिक जीवन में इन्द्रिय सुख के अतिरिक्त दोनों के लिए सब व्यर्थ है ।

भोगवाद के प्रति वर्माजी में सदैव आस्था रही है । वह उस अध्यात्मवाद में विश्वास नहीं करते,जिसमें आत्मा के हनन को महत्व दिया जाता है ।' भारतीय सामाजिक व्यवस्था को देखते हुए हम कह सकते हैं कि' वर्माजी की यह विचारधारा समाजोपयोगी नहीं है, क्योंकि यह समाज के लिए अत्यंत घातक और गर्हित है । इसके द्वारा समाज में अराजकता ही फैलेगी,जहाँ व्यवस्था तो दूर रही, सभ्य समाज की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती है । यद्यपि कुछ समीक्षकों ने वर्माजी के इस जीवन दर्शन को वर्तमान परिस्थिति में अत्यंत स्वस्थ एवं ग्रहण करने योग्य बताया है[१२]।" लेखक का चित्रलेखा में अभिव्यक्त जीवन दर्शन समाज के लिए भले ही अवांछनीय है, परन्तु तथाकथित समीक्षकों एवं समाजधर्मा लेखकों के लिए निस्सदेह ग्रहण करने योग्य स्वस्थ दृष्टिकोण है ।

चित्रलेखा में प्रवृत्तिमार्ग --

चित्रलेखा प्रवृत्ति मार्ग का प्रतिनिधित्व करती है। यह प्रवृत्तिमार्ग मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति से पैदा हुआ है। जीवन आनंद के लिए है, ईश्वर ने मनुष्य को नाक, कान, आँख और मुँह इसलिए दिये हैं कि वह तज्जनित आनंद का उपभोग करे। Eat, drink and be merry ' अर्थात खाओ, पिओ और मौज्ज उडाओ। प्रवृत्ति में कर्म पर बल दिया जाता है। प्रवृत्ति मार्ग के दो रूप हैं - एक गीता का कर्मवाद और दूसरा चार्वाक का भोगवाद। चार्वाक का कथन है कि इस जीवन का उपभोग, परलोक की मृगमरीचिका में पडकर अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों का दमन करना ही पाप है। जीवन का पूर्ण स्वस्थ उपभोग तो उसकी वास्तविकता को पहचानना है और उसके सबसे बडे साधन हैं - कामिनी, कंचन और कादम्ब। इनके बिना जीवन का कोई महत्व नहीं।

" लालायित अधरों से जिसने हाय नहीं चूमी हाला,
हर्ष विकम्पित कर से जिसने हा, छुआ न हेा मधु का प्याला।
हाथ पकड लज्जित साकी का, पास नहीं जिसने खींचा
व्यर्थ सुखा डाली जीवन की उसने मधुमय मधुशाला।" [१३]

` चित्रलेखा` इसी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती है। वर्माजी के ` चित्रलेखा` द्वारा यह भली-भाँति स्पष्ट हेा जाता है कि जहाँ वह कर्म पर बल देते हैं, वहाँ भोग के प्रति उनकी आस्था कम नहीं है। किन्तु वह आस्था चार्वाक के भोगवादी सूत्र से मेल नहीं खाती है। चार्वाक के भोगवाद में अच्छे बुरे, विधि - निषेध, सत - असत् आदि का कोई भेद नहीं है और न उसका कोई महत्व ही है। वह जीवन के भौतिक - सुखों को भरपूर उठाने पर बल देता है। परंतु वर्माजी भौतिक सुखों को महत्व देते हुए उसके उदासीकरण को वांछनीय मानते हैं। इसलिए चार्वाक और वर्माजी के जीवन दर्शन में कोई समता नहीं है और यह विषमता उतनी ही जितनी दोनों के जीवन क्रम, युग और व्यक्तित्व में है। एक दार्शनिक है तो दूसरा

साहित्यिक । वर्माजी ने अपनी इस दार्शनिक विचारधारा का प्रतिपादन `चित्रलेखा` में बीजगुप्त के माध्यम से किया है ।

`चित्रलेखा` उपन्यास के प्रारंभ में ही वर्माजी ने बिजगुप्त और चित्रलेखा के माध्यम से प्रवृत्ति मार्ग की झाँकी दिखा दी है । जब बीजगुप्त, चित्रलेखा को प्रश्न करता है कि चित्रलेखा जानती हो जीवन का सुख क्या है ? तब चित्रलेखा का उत्तर है मस्ती । मस्ती का मतलब यह होता है कि भूल यह जाना कि आगे क्या होनेवाला है और पीछे क्या हो चुका है । भूल इसलिए जाना कि भूत और भविष्य की कल्पना जीवन की मादकता को नष्ट न कर दे । बीजगुप्त जीवन का भरपूर आनन्द उठाता है । यौवन के वसन्त में मलयानिल की झकोरों में बीजगुप्त जीवन का प्रत्येक क्षण सुख से भरे दु:ख से परे व्यतीत करता है । बीजगुप्त पूर्णत: भोगी है । इसे स्पष्ट करते हुए लेखक ने कहा है कि` बीजगुप्त भोगी है, उसके हृदय में यौवन की उमंग है और आँखों में मादकता की लाली । उसकी अट्टालिकाओं में भोगविलास नाचा करते हैं, रत्न जटित मदिरा के पात्रों में ही उसके जीवन का सारा सुख है, वैभव और उल्लास की तरंगों में वह केलि करता है,ऐश्वर्य की उसके पास कमी नहीं हैं । उसमें सौन्दर्य है और उसके हृदय में संसार की समस्त वासनाओं का निवास है, उसके द्वारा पर मातंग झूमा करते हैं, उसके भवन में सौन्दर्य के मद से मतवाली नर्तकियों का नृत्य हुआ करता है । ईश्वर पर उसे विश्वास नहीं,शायद उसने कभी ईश्वर के विषय में सोचा तक नहीं है और तथा नरक की उसे कोई चिंता नहीं । आमोद प्रमोद ही उसके जीवन का साधन है और लक्ष्य भी है ।`[१४]

प्रवृत्तिमार्ग का रूप दिखा देने के बाद लेखक ने इसकी भी प्रारम्भ की है, उसको कसौटी पर भी कसा है ।

प्रवृत्तिमार्ग का केवल वर्तमान की बात सोचता है --

" Unborn tomorrow and dead Yesterday
Why fret about if today be sweet "[15]

` कल` का जन्म भी नही हुआ और बीता कल तो मर गया । यदि आज मधुर है तो कल की चिंता क्यों ?` अभी तो चैन से कटती है,आकबत की खुदा जानें` प्रवृत्तिवादी` आज` पर ही जोर देता है किन्तु आज की बात वह केवल इसलिए सोचते हैं कि वह कल की कल्पना से घबराते हैं ।

चित्रलेखा एवं बीजगुप्त तथा चित्रलेखा एवं कुमारगिरि के सम्बन्धो द्वारा लेखक ने स्वच्छन्द प्रेम की हिमायत की है तथा वासनायुक्त प्रेम की निस्सारता प्रकट की है । कुमारगिरि बहि:स्थ जीवन का सुख भोगने से पूर्व ही योगी बन जाता है । वासनाओं को पाप समझाते हुए उनपर विजय पा लेने का ढोंग रचकर भी वह राग से निर्लिप्त नहीं रह पाता । अपनी वासनाओं का अस्वाभाविक दमन करने की चेष्टा में वह योगी के उच्च आसन से गिरता है । चित्रलेखा की दृष्टि में वह केवल अपने लिए जीवित रहनेवाला योगी है । उदारता के अभाव का कारण है उसका अहम्, जो संयम और तपस्या का ढोंग रचता है । नारी को पाप की जड,माया,मोह एवं वासना माननेवाले इस योगी को नारी के कारण ही पतित होते दिखाया गया है । उसके पतन द्वारा निवृत्ति मार्ग की हेयता एवं प्रवृत्तियों के स्वस्थ उपभोग की ओर संकेत किया गया है ।

` चित्रलेखा` को भी प्रवृत्ति में आस्था रखते दिखाया गया है । वह जीवन को अविकल कर्म मानती है, तथा संसार की बाधाओंसे मुख मोडनेवाले को ` कायर ` समझाती है । वह तपस्या को जीवन की भूल तथा` आत्मा का हनन` कहकर योगी को चेतावनी देती है । जीवन में उसने कई बार प्रेम किया और हर बार उसे यही अनुभव हुआ कि उसका प्रथम निर्णय गलत था । यही कारण है कि कुमारगिरि की वासना का शिकार उसे होना पडता है । प्रवृत्ति के अधीन चित्रलेखा अपने आप को रोक नहीं सकती ।

गलत तर्क प्रणाली का सहारा ही लेकर प्रवृत्तिमार्गी चित्रलेखा चुप नहीं रहती वरन अपनी प्रवृत्ति की तृप्ति के लिए वह बीजगुप्त को धोका देने का भी प्रयत्न करती है । उसका मन इतना अस्थिर हो जाता है कि जिस रहस्य को वह

अपने प्रियतम बीजगुप्त से छिपाना चाहती है, उसे वह श्वेतांक पर प्रकट कर देती है। भावों और विचारों की वह उथल पुथल प्रवृत्तिवादी के चरित्र पर पूर्ण प्रकाश डालती है। बीजगुप्त का यशोधरा से विवाह कराने की कल्पना में चित्रलेखा का त्याग नहीं वरन् स्वार्थ है। वह उससे छुटकारा पाना पाकर कुमारगिरि को प्राप्त करना चाहती है।

प्रवृत्ति के वश में पूरी तरह हो जाने पर मनुष्य का पूर्ण पतन हो जाता है, उसका विवेक तक नष्ट हो जाता है। इसलिए चित्रलेखा कुमारगिरि की चाल में आ जाती है। उसने ज्योंही यह कहा कि बीजगुप्त ने यशोधरा से विवाह कर लिया, चित्रलेखा का हिताहित ज्ञान जाता रहता है और वह कुमारगिरि की वासना का साधन बन जाती है।

इस प्रकार चित्रलेखा के जीवन से लेखक ने प्रवृत्ति मार्ग का अनौचित्य सिध्द किया है।

चित्रलेखा में निवृत्ति मार्ग --

भारतीय चिंतन पध्दति में - निवृत्ति और प्रवृत्ति दर्शन की दो धाराएँ मिलती है। निवृत्ति के अंतर्गत तपस्या, साधना और संन्यास पर बल दिया जाता है। `चित्रलेखा` में वर्माजी ने चित्रलेखा एवं कुमारगिरि के वादविवाद को `जीवन एवं मुक्ति की होड` कहकर अपने प्रवृत्ति विषयक दृष्टिकोण के पहलू को व्यक्त कर दिया है तथा अप्रत्यक्ष रूप से प्रवृत्ति एवं निवृत्ति विषयक उस प्रश्न का उत्तर दे दिया है, जिसे बीजगुप्त के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।[१६] बीजगुप्त भोगी है, उसके जीवन का सुख रत्नजडित मदिरा के पात्रों में है। ऐश्वर्य की उसके पास कमी नहीं है। उसके हृदय में संसार की समस्त वासनाओं का वास है। यही बीजगुप्त जिसका प्रेम के क्षेत्र में ही नहीं है मानवता के क्षेत्र में भी हृदय विशाल है।

बीजगुप्त धन - वैभव एवं जीवन की सुविधाओं को सहजता से भोगता है

और समय आने पर उतनी ही सहजता से त्यागकर पाने में समर्थ होता है। उसकी जीवन पध्दति को अधिक स्वाभाविक एवं श्रेष्ठ बतलाना लेखक की प्रवृत्ति में आस्था का परिचायक है। बीजगुप्त अपने लिए ही व्यक्ति स्वातंत्र्य नहीं चाहता, अपितु दूसरों के सुख के लिए त्याग करता है। बीजगुप्त कहता है कि 'दूसरों के सुख में बाधक होना केवल अपने सुख की आशा, कायरता है नीचता नहीं। मैं अन्याय कर रहा हूँ दूसरों के साथ स्वयं अपने साथ भी। हमारे हिस्से में सुख और दु:ख दोनों पड़े हैं - हमारा कर्तव्य है कि हम दोनों को ही साहस - पूर्वक भोगें।' [१७] स्पष्ट है कि बीजगुप्त भोगी है, पर पतित नहीं। इसीलिए आर्य सम्राट चंद्रगुप्त तक उसके सम्मान में नतमस्तक हो जाते हैं। उसने जीवन से सहयोग कर लिया है और अपनी भावनाओं का उदात्तीकरण भी।

कुमारगिरि के अनुसार परिवर्तन वस्तु की क्रिया है। जिस वस्तु में जीवन है उसमें क्रिया होनी चाहिए और वही परिवर्तन है। परिवर्तन और स्थायित्व एक वस्तु के दो रूप हैं। अंतिम बीज है तो प्रथम उसका विस्तार। बस इसी तत्व को हृदयगम कर लेना ज्ञान की अंतिम सीढ़ी है। निवृत्तिमार्गी सत्य को इंद्रिय-ज्ञानतीत समझाता है। अत: सत्य को समझाने में बड़ी कठिनाइयाँ पड़ती है। यह कठिनाई प्रत्येक साधारण व्यक्ति के सामने आ सकती है।

'संसार शून्य है' इसका स्पष्टीकरण देते हुए कुमारगिरि आँखे बंद करके अर्थात इंद्रिय-निग्रह पर जोर देता है और दमन की आवश्यकता बतलाता है। इंद्रियों को अनेक स्वादों से दूर रक्खो न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। बस्, इसी सिध्दांत की आलोचना लेखक करना चाहता है। कुमारगिरि का यह कथन की इंद्रियों को बलात् रोक कर काम चलाओ, तभी शून्य की प्राप्ति होगी ठीक भी है। अनुभूति-विहीन स्थिति ही शून्य है और तभी 'सुख-दु:ख, अनुराग-विराम, दिन-रात, ब्रह्म और किन्तु माया लोप हो जाते हैं।' निवृत्तिमार्ग इसी स्थिति को 'मुक्ति' मानता है यह कितना हास्यास्पद है, 'कुमारगिरि' के जीवन से आसानी से समझा जा सकता है। कुछ अनुभव न करना मृत्यू की निशानी है मुक्ति नहीं।

' निवृत्तिमार्गी ' ऐसी मुक्ति क्यों चाहता है ? उसके इस उद्देश्य का भी विश्लेषण लेखक ने किया है । वास्तव में निवृत्तिमार्गी इन अनुभवों से उसी प्रकार डरता है जैसे प्रवृत्तिमार्गी भूत - भविष्य की कल्पनाओं से डरता है । यही निवृत्ति मार्गी की कमजोरी है । कुमारगिरि में यह निर्बलता प्रत्येक स्थल पर दिखलायी पड़ती है, इसीलिए वह चित्रलेखा की समीपता से घबराता है और उसे दिक्षा देने की हिम्मत कुमारगिरि को नहीं होती । इसी प्रकार निवृत्तिमार्गी पलायनवादी है । तथाकथित योग साधन की यह सच्ची आलोचना है । निवृत्तिमार्गी का यह संसार-त्याग है - उनका पलायन - क्या अपनी निर्बलताओं पर विजय प्राप्त करने के लिए है ? वास्तव में यह योग कल्पना प्रेरित है और वह कल्पना भी दूसरी दूनिया की । ऐसा योग-साधन जीवन को अकर्मण्य बना देने का बहाना है, यह जीवन की भूल है ।

निवृत्ति मार्गी की निर्बलता परलेखक ने जगह - जगह पर व्यंग्यात्मक संकेत किये हैं । एक रात को जब बीजगुप्त और चित्रलेखा कुमारगिरि के आश्रम में आश्रय लेते हैं,तो कुमारगिरि उन्हें ठहराने में संकोच करता है । तब बीजगुप्त कहता है -- ' यह नहीं सोचा था कि एक इंद्रियजित योगी को केवल रात्री भर के लिए एक स्त्री को ... आश्रय देने में संकोच होगा '[१८] इसी तरह ' प्रकाश पर लुब्ध पंतग को अंधकार का प्रणाम है '[१९] में अत्यंत तीखे व्यंग्य हैं ।

निष्कर्ष --

भगवतीचरण वर्मा जी के ' चित्रलेखा ' उपन्यास में भोगवाद के साथ-साथ नियती का कार्यकारण सम्बन्ध जोडकर प्रवृत्ति और निवृत्ति के द्वारा भारतीय कर्मवाद की स्थापना हुयी है । भगवती बाबू जिस भोगवाद का समर्थन करते हैं,वह उनके नियतीवाद के विश्वास का परिणाम है । उनकी मान्यता है कि मनुष्य परतंत्र है, परिस्थितियों का दास है, लक्ष्यहीन है । वह अज्ञात शक्ति से परिचालित है । मनुष्य की स्वेच्छा का कोई मूल्य नहीं है । अतएव स्वावलम्बी नहीं है,कर्ता भी

नहीं है अपितु साधन - मात्र है । स्पष्ट है कि मनुष्य जो कुछ आचरण करता है वह परिस्थितिगत होने के कारण स्वाभाविक है ।

` चित्रलेखा` में वर्माजी ने बीजगुप्त,नर्तकी,चित्रलेखा,योगी कुमारगिरि के द्वारा दार्शनिकता को अभिव्यक्त किया है । भोगी बीजगुप्त अंतत: योगी बनना चाहता है । वह अपना सबकुछ श्वेतांक को दान करता है तो दूसरी ओर योगी कुमारगिरि चित्रलेखा पर मोहित होता है । वह चित्रलेखा को चाहता है । यहाँ उसका पतन होता है । वह इस तरह निचे गिरकर भोगी बन जाता है । कुमारगिरि की असलियत मालूम होने पर चित्रलेखा बीजगुप्त को मिलना चाहती है । श्वेतांग का यशोधरा से विवाह होने पर बीजगुप्त के साथ चित्रलेखा भी चली जाती है । यह नियतिवाद कहीं भोगवादी दर्शन की अभिव्यक्ति करता है । इसप्रकार चित्रलेखा में दार्शनिकता भारतीय है, पाश्चात्य नही ।

` चित्रलेखा` मूलत: दार्शनिक उपन्यास है और मनुष्य की आचरण सम्बन्धि व्याख्या करना इसका उद्देश्य है । लेखक ने आचरण के भिन्न भिन्न सिध्दांतों जैसे प्रवृत्तिवाद,निवृत्तिवाद,आध्यात्मवाद,ईश्वर और जिसमें समाज की भलाई और उन्नति को ही सर्वापरि बताया गया है ।

` चित्रलेखा` बिल्कुल एक आचरणशास्त्र की पुस्तक जान पडती है । उसकी विशेषता यह है कि ऐसे रूखे विषय को इतने मनोरंजन रूप में वह प्रस्तुत करती है ।

सं द र्भ

१	रामश्वेलावन चौधरी	'चित्रलेखा परिचय'	पृ.४३
२	भगवतीचरण वर्मा	चित्रलेखा	पृ.६
३	डा.उदयभानु सिंह	तुलसी दर्शन निमाँसा	पृ.२६
४	भगवतीचरण वर्मा	साहित्य की मान्यताएँ	पृ.३४-३५
५	डा.बैजनाथ प्रसाद शुक्ल	भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना	पृ.३३१
६	भगवतीचरण वर्मा	चित्रलेखा	पृ.१७७
७	- वही -	-वही-	पृ.२४
८	- वही -	- वही -	पृ.१७
९	- वही -	- वही -	पृ.९९
१०	भगवतीचरण वर्मा	मधुकण	पृ.२५
११	डॉ.कुसुम वार्ष्णेय	भगवतीचरण वर्मा	पृ.१८
१२	हरिवंशराय बच्चन	मधुशाला	पृ.३६
१३	भगवतीचरण वर्मा	चित्रलेखा	पृ.७
१४	रामखेलावन चौधरी	चित्रलेखा परिचय	पृ.४७
१५	वीणा अग्रवाल	चित्रलेखा सृजनात्मक अनुकृति	पृ.२५
१६	भगवतीचरण वर्मा	चित्रलेखा	पृ.१६५
१७	- वही -	चित्रलेखा	पृ.२८
१८	- वही -	चित्रलेखा	पृ.२९